गर्भ निरोधक टीका

जोखिम में जान

विनीता बाल, लक्ष्मी मूर्ति व वाणी सुब्रमण्यन

स्वास्थ्य सेवाओं में बढ़ते निजीकरण और निजी प्रैक्टिस करने वालों का सरकारी परिवार कल्याण कार्यक्रमों में दखल के परिप्रेक्ष्य में गर्भनिरोधक टीके के कार्यक्रम में प्रवेश की सम्भावना अत्यंत चिन्ताजनक विषय है.......

आज से पंद्रह बरस पहले, जब आंध्रप्रदेश के पातनचेरू प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के परिवार कल्याण शिविर में महिलाएं गर्भनिरोधक इंजेक्शन लगवाने गईं तो उन्हें नहीं मालूम था कि वे इतिहास रचने जा रही हैं। जानकार सहमति की बेहद ज़रूरत, दवा की हानिप्रद प्रकृति और लम्बे समय तक काम करने वाले इस हॉर्मोनल गर्भनिरोधक की हमारे बीमार स्वास्थ्य तंत्र में अनुपयुक्तता जैसे मुद्दों को लेकर स्त्री शक्ति संघटना, सहेली, चिंगारी नामक समूहों और कई अन्य लोगों ने 1996 में सुप्रीम कोर्ट में याचिका दायर कर दी। उनकी मुख्य मांग थी गर्भनिरोधक टीके नोर्थिस्टेरॉन एनैनथेट (नेट एन) के चौथे चरण के चिकित्सीय परीक्षण पर रोक लगाना।

सुप्रीम कोर्ट द्वारा हाल ही में दिया फैसला 'नेट एन प्रकरण' के नाम से जाना जाता है। नुकसानदेह गर्भनिरोधकों के खिलाफ महिला आंदोलन के अभियान के लिए यह फैसला काफी महत्वपूर्ण है। फैसले में अदालत ने स्वीकार किया है कि परिवार कल्याण कार्यक्रमों में नेट एन के बड़े पैमाने पर उपयोग की सलाह नहीं दी जा सकती है; इसका स्पष्ट आशय यह है कि नेट एन के उपयोग के जोखिम तथा इस्तेमाल करने के दौरान उपयोगकर्ताओं की मॉनीटरिंग और अनुवर्तन (टीका लगाए जाने के बाद जानकारी प्राप्त करने के लिए लगातार सम्पर्क करने) की ज़रूरत से इंकार नहीं किया जा रहा है।

जनसंख्या नियंत्रण के तरीके

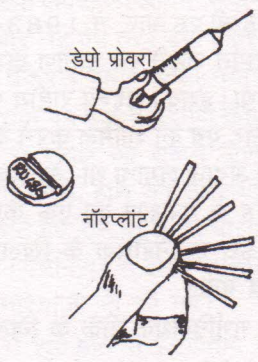

भारत सरकार के शपथ पत्र में कहा गया है कि 'स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय नए गर्भनिरोधक टीके नेट एन को उन्हीं जगहों पर उपयोग के लिए प्रस्तावित कर रहा है जहां इसके अनुवर्तन करने व सलाह-मशविरा मुहैया कराने की पर्याप्त व्यवस्था है।'

नेट एन प्रकरण 1986 में केंद्र सरकार के खिलाफ सचिव, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद् (आई.सी.एम.आर.), आंध्रप्रदेश एवं भारत के दवा नियंत्रक के नाम से दायर किया गया था। इसमें निम्न मुद्दों को उठाया गया था -

***नेट एन के लघु व दीर्घावधि दुष्परिणामः** मस्तिष्क के हाइपोथैलेमस-पिट्यूटरी (पीयूष) अक्ष पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की वजह से शारीरिक तंत्र में गड़बड़ियां हो जाती हैं, मासिक स्राव में अनियमितता आदि लघु अवधि के दुष्परिणाम हैं। दीर्घावधि जोखिमों में कैंसर की सम्भावना, गर्भस्थ शिशु पर बुरा प्रभाव तथा पुनः मातृत्व पाने की अनिश्चितता शामिल है।

* नेट एन प्रकरण में चिकित्सीय नैतिकी का पालन नहीं किया गया, जैसे जिन महिलाओं को नेट एन के परीक्षण में शामिल किया गया था उन्हें इस दवाई के दुष्परिणाम की कोई जानकारी नहीं दी गई थी। न ही उन्हें बताया गया था कि उन पर एक अप्रमाणित दवा का प्रयोग किया जा रहा है।

* लम्बे समय तक काम करने वाले हॉर्मोनल गर्भनिरोधक को लगाने सम्बंधी अपर्याप्त सुविधाएं। स्वास्थ्य सेवा तंत्र

में विपरीत लक्षणों (जैसे गर्भ ठहरना, लीवर की बीमारी, स्तन कैंसर, हृदयरोग, खून के थक्के बनना, युटेराइन सर्वाइकल हाइपर प्लासिया यानी बच्चेदानी में सामान्य कोशिकाओं की सामान्य व्यवस्था में असामान्य वृद्धि) की सम्भावना को खत्म करने हेतु पर्याप्त सुविधाएं नहीं हैं। इसके अलावा गर्भनिरोधक लेना बन्द कर देने के बाद महिला व उसके बच्चे की देखरेख व अनुवर्तन की व्यवस्था का स्वास्थ्य तंत्र में न होना।

* सरकार के लक्ष्य आधारित जनसंख्या नियंत्रण कार्यक्रम में लम्बे समय तक प्रभावी रहने वाले इस गर्भ निरोधक के दुरुपयोग की सम्भावना। इससे भी इंकार नहीं कि गर्भनिरोधक का उपयोग महिला की जानकारी के बिना भी किया जा सकता है। टीके के प्रति हमारा अटूट विश्वास और चहुं ओर फैली 'टीका संस्कृति' इस गर्भनिरोधक के दुरुपयोग की सम्भावना को और बढ़ाती है। वैसे एक असरदार गर्भनिरोधक की स्वाभाविक ज़रूरत को देखते हुए यदि किसी महिला को इन टीकों के केवल फायदों को बढ़ा-चढ़ाकर बताया जाए और सम्भावित खतरों को सरकार और दवा कम्पनियों के प्रोपेगैण्डा तले दबा दिया जाए तो वे उस गर्भनिरोधक को 'स्वीकार'/'चुन' सकती हैं। मसलन पातनचेरू प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र की महिलाओं को सिर्फ यही कहा गया था ''इंजेक्शन ले लो, बच्चा नहीं होगा।''

इस याचिका में व्यापक परिवार कल्याण कार्यक्रम तथा ग्रामीण स्वास्थ्य नेटवर्क में नेट एन की व्यवहार्यता पर गंभीर आपत्तियां उठाई गई हैं। इनमें से अधिकांश आपत्तियां अब भी लागू होती हैं। सरकारी स्वास्थ्य तंत्र की बदहाली से हम अपरिचित नहीं हैं, इसलिए अनुवर्तन और विचार विमर्श की सुविधा सम्बंधी ज़रूरतों (शर्तों) को स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं व महिला समूहों द्वारा परिभाषित किए जाने की ज़रूरत है ताकि उपयोगकर्ताओं की पर्याप्त देखभाल हो सके और नैतिकता का पालन भी किया जा सके। स्वास्थ्य सेवाओं में बड़ी संख्या में गैर सरकारी संगठनों के प्रवेश से भी नए सरोकार उपजे हैं।

नेट एन तथा डेपो प्रोवेरा (एक अन्य गर्भनिरोधक टीका-डेपो मेड्रॉक्सी प्रोजेस्टेरॉन एसीटेट, डी.एम.पी.ए.) दोनों 1950 में विकसित होने के बाद से ही विख्यात हो गए थे। दवा रूप में इन गर्भनिरोधकों के इस्तेमाल को लेकर सारी दुनिया में सवाल उठाए गए क्योंकि इनके इस्तेमाल से कई अल्पावधि व दीर्घावधि खतरे जुड़े थे। इस सम्बंध में अमरीका तथा ब्रिटेन में जन सुनवाई हुई जिसमें महिलाओं के समूहों ने इस टीके के सम्भावित खतरों और दुरुपयोगों की बात रखी।

भारत में 80 के दशक के उत्तरार्ध में महिला समूह व स्वास्थ्य कार्यकर्ता टीकों के बारे में जागरूक थे। जब नेट एन के चिकित्सीय परीक्षणों की खबरें सार्वजनिक हुईं तो नेट एन के सम्भावित खतरे वास्तविक रूप धर सामने आने लगे। 1983 में आई.सी.एम.आर. की पहली प्रेस विज्ञप्ति में नेट एन को परिवार नियोजन कार्यक्रम में शामिल करने का इरादा ज़ाहिर किया गया। फिर महिला समूह तथा स्वास्थ्य समूह जैसे ड्रग एक्शन नेटवर्क और मेडिको फ्रेंड्स सर्किल ने उन चिकित्सीय परीक्षणों की जानकारी चाही जो उन्हें नहीं दी गई। आई.सी.एम.आर. ने 1983 व '84 में चौथे चरण के अंतर्गत शहरी एवं ग्रामीण केंद्रों पर एक अध्ययन शुरू किया। इसका उद्देश्य राष्ट्रीय परिवार कल्याण कार्यक्रम में नेट एन को शामिल करने के लिए उसकी स्वीकार्यता का अंदाज़ लगाना था। आंध्रप्रदेश का पातनचेरू भी इसी तरह के परीक्षण का एक केंद्र था। बाद में पातनचेरू ही इस गर्भनिरोधक के खिलाफ अभियान छेड़ने वाला केंद्र बना।

गर्भनिरोधक टीके के खिलाफ अभियान काफी तीव्र

नेट एन तथा डेपो प्रोवेरा (एक अन्य गर्भनिरोधक टीका – डेपो मेड्रॉक्सी प्रोजेस्टेरॉन एसीटेट, डी.एम.पी.ए.) दोनों 1950 में विकसित होने के बाद से ही विख्यात हो गए थे। दवा रूप में इन गर्भनिरोधकों के इस्तेमाल को लेकर सारी दुनिया में सवाल उठाए गए क्योंकि इनके इस्तेमाल से कई अल्पावधि व दीर्घावधि खतरे जुड़े थे।

और मुखर रहा है। भारत के महिला समूह अमरीका तथा ब्रिटेन में चल रहे गर्भनिरोधक सम्बंधी विवाद से अवगत थे। भारत में इन गर्भनिरोधकों के चिकित्सीय परीक्षणों के सम्बंध में काफी गोपनीयता बरती जाने के बावजूद महिला समूहों ने मशक्कत करके आंकड़े इकट्ठे कर इनके दुरुपयोग के उदाहरण पेश किए। यद्यपि इस तरह के प्रयासों को सरकार द्वारा रोकने की भरपूर कोशिश की गई तथा सरकारी मामलों में गर्भ निरोधक के सम्बंध में पूरी अपारदर्शिता रही। अनैतिक परीक्षण तथा गर्भनिरोधकों के दुरुपयोग का विरोध भारत के महिला आंदोलन के लिए एक महत्वपूर्ण मुद्दा था। शहर के स्वायत्त समूहों तथा स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं से शुरू हुए इस अभियान के साथ बाद में कई प्रगतिशील संगठन भी जुड़े। इनमें वामपंथी दलों की महिला इकाइयां, लोकतांत्रिक अधिकार समूह आदि थे।

गर्भनिरोधक का विरोध-अभियान काफी दबाव डालने वाला तथा नवाचारी था। धरना, बैठकों से लेकर स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, आई.सी.एम.आर. तथा अन्य सरकारी संस्थाओं पर प्रदर्शन किए गए। ड्रग कंट्रोलर का उसी के दफ्तर में घेराव किया गया तथा ड्रग उद्योग की बैठकों में बिन बुलाए पहुंचकर धावा बोल दिया। प्रतिरोध के स्वर उग्र और स्पष्ट थे। इसकी प्रतिक्रिया भी उतनी ही तीव्र हुई, मसलन स्थानीय प्रेस ने महिला कार्यकर्ताओं द्वारा दीवार कूदकर मेम्स फार्मा (दिल्ली) द्वारा आयोजित मीटिंग रोकने को 'अस्त्रीयोचित' बताया। इस बैठक में डेपो प्रोवेरा को भारत में लॉन्च किया जाना था।

कानूनी मोर्चे पर भारत में टीके का प्रवेश रोकने हेतु जनहित याचिका की मदद ली गई। पहली कानूनी कार्यवाही मुम्बई में हुई जहां डेपो प्रोवेरा का आयात रोकने सम्बंधी कार्यवाही की गई, फिर नेट एन तथा डेपो प्रोवेरा के खिलाफ सुप्रीम कोर्ट में प्रकरण दायर किया गया।

लोगों तक पहुंचना अभियान का एक महत्वपूर्ण काम रहा। इसके लिए आसानी से समझ आ सकने वाली सामग्री जैसे बुकलेट, पोस्टर, पर्चे, हाथ की तख्तियां, बिल्ले आदि जनता के बीच बांटे गए; इस बहस को चौराहे व गलियों तक ले जाया गया। गर्भनिरोधक टीकों सम्बंधी गाने गाए गए; घेराव और नारेबाज़ी भी की गई।

नेट एन और डेपो प्रोवेरा शुरुआत से ही विवाद व विरोध का विषय रहे हैं। 1986 में पातनचेरू में इसके अनैतिक चिकित्सीय परीक्षण की बात लोगों तक पहुंचने के बाद से ही नेट एन को परिवार कल्याण कार्यक्रम में इस्तेमाल करने के औचित्य के बारे में सवाल किए जाने लगे। इसके बाद लगने लगा था कि नेट एन को ठण्डे बस्ते में डाल दिया गया है। लेकिन नॉरप्लांट; हॉर्मोनल इम्प्लांट, हॉर्मोनल योनिछल्ला आदि के चिकित्सीय परीक्षण पर काम होने लगा। इसके अलावा कम खुराक वाले टीके तथा महीने में एक बार लगाए जाने वाले टीके, कम साइड प्रभाव वाले इस्ट्रोजन-प्रोजेस्टीन संयोजन, प्रजननरोधी टीकों पर भी शोध किए जाने लगे।

इस बीच टीकों को बाज़ार में लाने व उनका पंजीयन कराने की कोशिशें भी चलती रहीं। साथ ही सरकारी कार्यक्रमों में टीके शामिल करने के प्रस्ताव पारित करने के प्रयास भी यदाकदा होते रहे।

भारत के ड्रग कंट्रोलर ने 1988 में निजी चिकित्सकों को नेट एन का आयात व विपणन करने की मंजूरी दे दी। इस तथ्य को काफी छिपाकर रखा गया। 1994 में वह तब सामने आया जब नेट एन को भारत में अधिकृत तौर पर लोगों के बीच लाया गया। विज्ञापनों व संदेशों के माध्यम से समाज में उसकी स्वीकार्य छवि बनाने की भरसक कोशिश की गई। इसी साल डेपो प्रोवेरा को भी लोगों के बीच परोसने की कोशिशें हुईं। इसके बाद महिला समूहों ने उक्त गर्भनिरोधकों के खिलाफ विरोध का स्वर तेज़ कर दिया क्योंकि नेट एन के विरुद्ध मामला अभी भी अदालत में चल रहा था और इस मामले में उठाए गए मुद्दों का सरकार ने कोई संतोषजनक जवाब नहीं दिया था।

1994 में जागोरी व अन्यों ने डेपो प्रोवेरा पर प्रतिबंध के लिए एक और याचिका कोर्ट में दायर की। वहीं इस दवा की सीधे काउंटर से बिक्री के अविवेकपूर्ण निर्णय से स्थिति और बिगड़ गई। इसके अलावा अन्य गैर सरकारी संस्थाओं के स्वास्थ्य कार्यक्रमों के ज़रिए उक्त गर्भ निरोधकों का बांटा जाना एक और चिन्ताजनक विषय बना। फिर भी परिवार कल्याण कार्यक्रम में इन टीकों के व्यापक उपयोग का वास्तविक खतरा अभी तक दूर था। हां यह लगने लगा था कि सरकार इन टीकों को परिवार कल्याण कार्यक्रम में लाने के प्रयास में लगी है।

1992 में राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (एन.एफ.एच.एस.) के आंकड़ों से पता चला कि पलटनीय (रिवर्सिबल) आधुनिक गर्भनिरोधक तरीकों का उपयोग केवल 5.5 प्रतिशत दम्पति ही करते हैं। इस पर स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय ने भारत में अपने परिवार कल्याण कार्यक्रमों में सुधार लाने की कार्ययोजना के तहत पलटनीय गर्भनिरोधकों पर अधिक ज़ोर देने का फैसला किया; ऐसा खास तौर पर युवा जोड़ों को ध्यान में रखकर किया गया जिनमें प्रजनन क्षमता अधिक होती है। लेकिन नेट एन के सुरक्षा सम्बंधी गंभीर सवालों को नज़रअंदाज़ कर और इन गर्भ निरोधकों के खिलाफ राष्ट्रीय अभियान की आवाज़ को अनसुना कर मंत्रालय ने अपनी कार्ययोजना में इन टीकों को शामिल करने की सिफारिश कर दी।

मंत्रालय के अनुसार ''पहले इन टीकों को धीरे-धीरे नियंत्रित रूप में तथा बाद में व्यापक पैमाने पर कार्यक्रम में शामिल किया जा सकता है''। सरकार के इस कदम को विश्व बैंक का समर्थन प्राप्त था। गौरतलब है कि विश्व बैंक की सिफारिश पर ही सरकार ने प्रजनन और बाल स्वास्थ्य कार्यक्रम में सुधार लाने की पहल की थी। विश्व बैंक के अनुसार ''सुरक्षित, प्रभावी व सुविधाजनक पलटनीय तरीकों की ज़रूरत के मद्देनज़र देश के हर क्षेत्र में चल रहे कार्यक्रमों में इस पद्धति को क्रमबद्ध तरीके से शामिल किए जाने की ज़रूरत नज़र आती है। इसके लिए आवश्यक ट्रेनिंग, निगरानी और मॉनीटरिंग आई.सी.एम.आर. एवं मेडिकल कॉलेजों की हो।''

इस तरह की सिफारिश काफी गैर ज़िम्मेदाराना है क्योंकि विश्वबैंक को भारत में स्वास्थ्य कार्यक्रमों की स्थिति तथा मॉनिटरिंग व फॉलोअप की कमी से भलीभांति वाकिफ होना चाहिए।

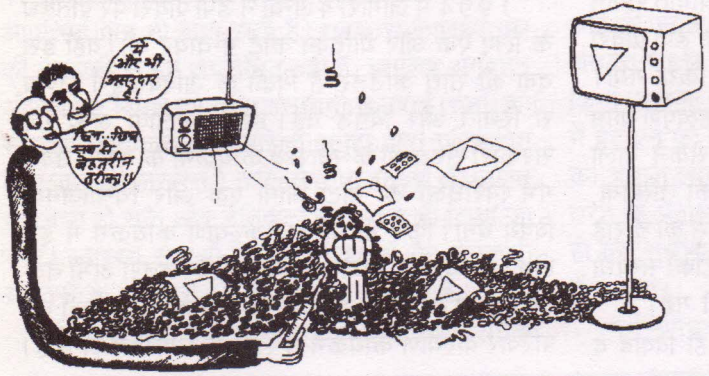

इंस्टीट्यूट फॉर रिसर्च इन रिप्रोडक्शन (आई.सी.एम.आर. का एक संस्थान) ने मुम्बई में 1998, दिसम्बर में एक कार्यशाला आयोजित की। विषय था 'राष्ट्रीय परिवार कल्याण कार्यक्रम में गर्भ निरोधकों के चलन में सुधार'। इस कार्यशाला से नेट एन को राष्ट्रीय कल्याण कार्यक्रम में शामिल करने की सरकारी मंशा की झलक मिली। इस कार्यशाला में यह स्पष्ट था कि फोरम ऑफ विमेन हेल्थ, सी.ई.एच.ए.टी. तथा अन्य महिला व स्वास्थ्य समूहों ने इन गर्भनिरोधकों के सम्भावित जोखिमों और दुरुपयोगों की सम्भावना के चलते इस प्रस्ताव का भारी विरोध किया।

बैठक में सिफारिश की गई कि ''प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों को उपलब्ध इंफ्रास्ट्रक्चर; काउंसलिंग, स्क्रीनिंग व उपयुक्त स्वास्थ्य सुविधाओं की ज़रूरत को देखते हुए गर्भ निरोधक टीकों को पहले सुविधाओं से युक्त चुनिन्दा केंद्रों व अस्पतालों में लाया जाए। इस बात पर भी ज़ोर हो कि गर्भ निरोधक का शामिल होना धीरे-धीरे हो व चिकित्सा सुविधा बेहतर होने के साथ-साथ टीके के महिलाओं पर होने वाले दुष्परिणामों की पूरी-पूरी निगरानी और देखरेख पर खास ध्यान हो।''

अगस्त, 1996 में भारत सरकार तथा यूएनएफपीए ने कार्यक्रम की समीक्षा तथा रणनीतिक विकास का काम अपने हाथ में लिया ताकि ''स्वास्थ्य देखरेख को लेकर सरकारी प्रयासों को वृहतर किया जाए और जनसंख्या के मुद्दों और सरोकारों को समग्र विकास के परिप्रेक्ष्य में देखा जाए; इसके दौरान महिलाओं की ज़रूरतों पर भी खास ज़ोर हो। एक अनुमान के अनुसार इसमें बच्चों के बीच अंतर रखने के तरीकों की ओर स्पष्ट झुकाव होगा। गर्भनिरोधक का इस्तेमाल करने वाले 5.5 प्रतिशत लोग टीकों का इस्तेमाल करने लगेंगे। इस भविष्यवाणी का आधार स्पष्ट नहीं है- क्या यह उपयोगकर्ताओं का सोच है या महिलाओं के सरोकारों के इतर कोई अन्य ताकतें इसके पीछे हैं (जैसे दवा निर्माता और अन्तर्राष्ट्रीय दाता संस्थाएं)।

नए सरोकार

स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में बढ़ते निजीकरण तथा खास तौर पर परिवार कल्याण के क्षेत्र में गैर सरकारी संगठनों के प्रवेश से कई और मुद्दे सामने आ गए हैं - उत्तरदायित्व के अभाव से लेकर उनके कामकाज की अपर्याप्त मॉनीटरिंग तक। कई सारे गैर सरकारी संगठन क्विनाक्राइन, आर.यू. 486, गर्भपात की गोली तथा डेपो प्रोवेरा पर चिकित्सा अनुसंधान व परीक्षण कर रहे हैं।

अमरीकी अधिकारियों के हालिया बयानों से भी यह स्पष्ट है कि जनसंख्या नियंत्रण के लिए दी जा रही मदद कोई परोपकार नहीं है बल्कि इसके पीछे व्यापारिक हित तथा तीसरी दुनिया के देशों की आबादी फैलने का डर भी है। अमरीकी विदेश सचिव ने एक बयान में कहा कि अंतर्राष्ट्रीय परिवार नियोजन कार्यक्रम, अमरीका की विदेश नीति के हित में भी काम कर रहा है। महिलाओं की स्थिति सुधारने, शरणार्थियों की संख्या कम करने, वैश्विक पर्यावरण का संरक्षण करने तथा टिकाऊ विकास को बढ़ावा देने से आर्थिक वृद्धि होगी और अमरीकी व्यापार के लिए नए अवसर भी बनेंगे।

विश्व बैंक की जनसंख्या सम्बंधी गतिविधियां भी अब इस बात पर केंद्रित हो गई हैं कि ''प्रजनन क्षमता में कमी लाने को राष्ट्रीय विकास का उद्देश्य बनाया जाए तथा जनसंख्या कार्यक्रमों को लागू करने हेतु लोन आदि दिए जाएं। दूसरे शब्दों में विश्व बैंक ने जनसंख्या नियंत्रण को तीसरी दुनिया की सरकारों को ऋण, अनुदान आदि देने हेतु ज़रूरी शर्त बना दिया है। इसी के चलते भारत सरकार तथा विश्व बैंक द्वारा स्वास्थ्य कार्यक्रमों की क्षेत्रवार समीक्षा करने के बाद लागू किए गए बाल स्वास्थ्य एवं प्रजनन कार्यक्रमों में निजी क्षेत्र तथा गैर सरकारी संगठनों दोनों के लिए महत्वपूर्ण भूमिका परिकल्पित की गई है।

अपने लचीले ढांचे और लोगों तक बेहतर पहुंच के चलते कार्यक्रम लागू करने के संदर्भ में गैर सरकारी संगठन ज़्यादा गम्भीर और विश्वसनीय नज़र आते हैं। सरकार का इरादा इस खूबी के पूरे-पूरे इस्तेमाल का है। लेकिन कई गैर सरकारी संगठन सरकार के कार्यक्रम लागू करने की एजेंसी के अलावा कुछ और भी हैं चूंकि उन्हें विदेशी दानदाता एजेंसियों से मदद मिलती है। उन्हें अपने अस्तित्व के लिए अनुदान पर निर्भर रहना पड़ता है इसीलिए उनके द्वारा दानदाता-निर्धारित एजेंडे की आलोचना की सम्भावना कम हो जाती है - चाहे वह परिवार नियोजन हो या प्रजनन स्वास्थ्य।

इंस्टीट्यूट फॉर रिसर्च इन रिप्रोडक्शन (आई.सी.एम.आर. का एक संस्थान) ने मुम्बई में 1998, दिसम्बर में एक कार्यशाला आयोजित की। विषय था 'राष्ट्रीय परिवार कल्याण कार्यक्रम में गर्भ निरोधकों के चलन मे सुधार'। इस कार्यशाला से नेट एन को राष्ट्रीय कल्याण कार्यक्रम में शामिल करने की सरकारी मंशा की झलक मिली। इस कार्यशाला में यह स्पष्ट था कि फोरम ऑफ विमेन हेल्थ, सी.ई.एच.ए.टी. तथा अन्य महिला व स्वास्थ्य समूहों ने इन गर्भनिरोधकों के सम्भावित जोखिमों और दुरुपयोगों की सम्भावना के चलते इस प्रस्ताव का भारी विरोध किया।

हालांकि अब तक नेट एन तथा डेपो प्रोवेरा के व्यापक उपयोग की सरकारी इजाज़त नहीं दी गई थी लेकिन बावजूद इसके डी.के.टी. इंटरनेशनल मुंबई, फेमिली प्लानिंग एसोसिएशन ऑफ इंडिया, मेरी स्टोप्स क्लीनिक/परिवार सेवा संस्थान (जिसकी देश भर में शाखाएं हैं) आदि गैर सरकारी संगठनों ने डेपो प्रोवेरा को अपने प्रजनन स्वास्थ्य पैकेज में शामिल कर लिया है। इन्हें बच्चों के बीच अन्तर रखने के तरीकों में ज़्यादा विकल्प की सुविधा देने के बतौर प्रस्तुत किया जा रहा है।

कम जानी-पहचानी हॉर्मोनल डाइइथाइल स्टिलबेस्ट्राल (डी.ई.एस.), मुंह से ली जाने वाली गर्भनिरोधक गोलियां तथा हॉर्मोनल आई.यू.डी. जैसे गर्भनिरोधकों के दूरगामी

परिणाम व बच्चों पर उनके प्रभाव तुरंत पता नहीं चलते हैं। अधिकांश देशों में इन गर्भनिरोधकों को जन उपयोग में लाने से पूर्व इनके जानवरों पर व चिकित्सीय परीक्षण किए गए जिससे पता चला कि कुछ समय के लिए तो ये गर्भनिरोधक सुरक्षित और प्रभावी हैं। लेकिन बड़ी संख्या में महिलाओं का विपणन पश्चात निरीक्षण (पी.एम.एस.) करने पर इस गर्भनिरोधक के कम दिखाई पड़ने वाले या लम्बे समय बाद प्रकट होने वाले साइड प्रभावों का पता चला।

पी.एम.एस. को कड़ाई से करना इसलिए भी आवश्यक है क्योंकि अलग-अलग आबादी टीकों के प्रति अलग-अलग प्रतिक्रिया दर्शाती है। भारत में नेट एन उपयोगकर्ताओं का फॉलोअप दो साल से अधिक समय तक नहीं किया गया। आई.सी.एम.आर. की सिफारिश पर दवा नियंत्रक ने 1986 में नेट एन की तथा 1993 में डेपो प्रोवेरा की निजी बाज़ार में बिक्री करने को मंजूरी दे दी। दोनों ही मामलों में मंजूरी इस सलाह के साथ दी गई थी कि दवा कंपनियां पी.एम.एस. करेंगी। पर आज तक नेट एन पर किया गया कोई भी पी.एम.एस. सार्वजनिक नहीं किया गया।

डेपो प्रोवेरा की उत्पादक कम्पनी फार्मासिया अपजॉन द्वारा कराए गए पी.एम.एस. में इस गर्भनिरोधक की सुरक्षा जानने की वास्तविक प्रतिबद्धता नदारद है। पहले तो कम्पनी का यह कहना सही नहीं कि डेपो प्रोवेरा का अध्ययन पांच साल का था। 1999 में आई अंतिम रपट को सितम्बर,2000 में सार्वजनिक किया गया। यह रपट जून 1994 से दिसम्बर 1997 के बीच भर्ती 1079 महिलाओं पर आधारित है। रपट की बारीक छानबीन से पता चलता है कि हर महिला उपयोगकर्ता का अध्ययन 5 तिमाही इंजेक्शन यानी 15 माह की अवधि में किया गया। ऐसे अध्ययन का कोई औचित्य नहीं है क्योंकि बच्चों में अन्तर रखने के एक तरीके के रूप में डेपो प्रोवेरा के उपयोग का असर जानने के लिए कम से कम दो या तीन साल की अवधि का अध्ययन ज़रूरी है। 15 माह की अवधि इस गर्भनिरोधक के दुष्परिणाम जानने के लिए काफी अपर्याप्त थी। साथ ही अपर्याप्त आंकड़ों के आधार पर डेपो प्रोवेरा को 'सुरक्षित' कह देना भी अवैज्ञानिक होगा।

यहां यह भी याद रखा जाना ज़रूरी है कि गर्भनिरोधक का उपयोग अधिकांशतः युवा महिलाएं करती हैं जो उस वक्त अपने जीवन की उत्कृष्ट अवस्था में होती हैं। ऐसी स्थिति में कोई भी साइड प्रभाव जो उनकी दैनिक गतिविधियों को व उनकी उत्पादकता को नुकसान पहुंचा सकता है 'गंभीर' होगा। इसके फायदे-नुकसान का आकलन, किसी बीमारी के फायदे-नुकसान के आकलन से अलग होना चाहिए। इस अध्ययन में एक कमी तो यह थी कि इसमें हड्डी के घनत्व के कम होने को जोखिमों की फेहरिस्त में शामिल नहीं किया गया है। भारत में यह इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि यहां महिलाओं की हड्डी

का घनत्व वैसे ही कम रहता है। इसके अलावा अध्ययन में कैंसर के जोखिम का भी आकलन नहीं किया गया, बावजूद इसके कि अन्य देशों में किए गए दीर्घावधिक अध्ययनों से पता चला है कि जवान महिलाओं में (खास तौर पर) डेपो प्रोवेरा से छाती का कैंसर होने की सम्भावना रहती है।

इस अध्ययन में जनन क्षमता की पुनःप्राप्ति का आकलन नहीं किया गया है। यह एक बड़ी कमी है क्योंकि यहां एक ऐसे गर्भनिरोधक का अध्ययन किया जा रहा है जिसे बच्चों में अंतर रखने के तरीके के रूप में परोसा जा रहा है। इसके अलावा डेपो प्रोवेरा का इस्तेमाल रोकने के तुरंत बाद हुए गर्भधारण का संतान पर पड़ने वाले प्रभाव को भी अध्ययन में नज़रअंदाज़ किया गया है। मासिक धर्म नहीं होना, अनियमित रक्तस्राव, सामान्य कमज़ोरी, माइग्रेन तथा उदर की तीव्र ऐंठनों को भी

अनुसंधानकर्ताओं ने 'अगंभीर' माना है। जबकि उक्त परेशानियों से महिलाओं का दैनिक कामकाज प्रभावित हो सकता है, साथ ही उनका स्वास्थ्य भी प्रभावित हो सकता है। अनियमित रक्तस्राव या अचानक स्राव के बंद होने जैसी गंभीर परेशानियों से केवल काउंसलिंग से नहीं निपटा जा सकता जैसा कि दवा निर्माता की राय है। पहले से ही खून की कमी से पीड़ित भारतीय महिलाओं में अत्यधिक रक्तस्राव समस्या को और गम्भीर बना देता है। विशेषज्ञों का कहना है कि मासिक चक्र का पैटर्न महिलाओं के स्वास्थ्य की स्थिति जानने का एक पुख्ता तरीका है। और इसमें हुई गड़बड़ी कई बीमारियों के होने को प्रभावित कर सकती है। इसमें कैंसर जैसी बीमारियों के प्रति प्राकृतिक प्रतिरोध भी शामिल है। इसी प्रकार मासिक धर्म नहीं होना एक गम्भीर घटना है जिससे महिला की संतानोत्पादन क्षमता प्रभावित हो सकती है।

यह अध्ययन चिकित्सीय शोधों के अंतर्राष्ट्रीय दिशानिर्देशों की अवज्ञा करता है। इसमें दूध पिलाने वाली माताओं को अध्ययन का विषय बनाया गया है जोकि काउंसिल फॉर इंटरनेशनल ऑर्गनाइज़ेशन ऑफ मेडिकल साइंसेज़ के कोड के विरुद्ध जाता है। दूसरे, दूध पिलाने के दौरान डेपो प्रोवेरा के टीके लगाने का उनके स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है।

सरकारी परिवार नियोजन कार्यक्रम में टीकों के उपयोग पर पी.एम.एस. का क्या प्रभाव पड़ेगा?

1) पी.एम.एस. दर्शाता है कि उच्च नियंत्रण स्थिति के बावजूद महिला के गर्भधारण करने को डीएमपीए की पहली खुराक से पहले नहीं जाना जा सकता। इसलिए डीएमपीए के संतान पर होने वाले बुरे प्रभावों से बचा नहीं जा सकता। वास्तविक परिस्थितियों में ऐसी घटनाओं की सम्भावना काफी ज़्यादा रहती है।

2) इस नियंत्रित अध्ययन तक में इंजेक्शन देने की समयावली का अनुसरण नहीं किया गया है। टीके मासिक धर्म के पहले पांच दिन के दौरान देने होते हैं और फिर अगले टीके भी इसी क्रमानुसार दिए जाने होते हैं। पर पी.एम.एस. अध्ययन में कई महिलाओं को अनियमित अंतराल से टीके दिए गए। इसका टीके की कारगरता पर सीधा प्रभाव पड़ता है। ऐसे में पहले से ही कई कामों तले दबे परिवार नियोजन कार्यक्रमों में टीके के समय का ध्यान रखा जाएगा यह शंकास्पद है।

3) वाइरल हिपेटाइटिस को भी 'अगम्भीर' बीमारी के रूप में वर्गीकृत किया गया है जिससे कई महिलाएं अध्ययन से बाहर हो गईं। परिवार नियोजन कार्यक्रम में यह सम्भव नहीं लगता कि हिपेटाइटिस बी की सक्रिय पहचान हो पाएगी।

1995 में उक्त चिंताओं ने ड्रग टेक्निकल एडवाइज़री बोर्ड (डीटीएबी) को गर्भनिरोधक टीकों को परिवार कल्याण कार्यक्रम में शामिल करने के कदम की पुर्नसमीक्षा हेतु प्रेरित किया। डीटीएबी ने ''डेपो प्रोवेरा को परिवार कल्याण कार्यक्रम में शामिल नहीं करने की'' सिफारिश की। जब तक स्वास्थ्य के बुनियादी ढांचे की सभी कमियां दूर न हो जाएं, टीकों को परिवार कल्याण कार्यक्रम में शामिल करना बड़े पैमाने पर बीमारियों को न्यौता देना होगा। इसके अलावा स्वास्थ्य सेवा के निजीकरण तथा चिकित्सा अनुसंधानों को भी संदेह की दृष्टि से देखा जाना चाहिए।

हमें यह भी नहीं भूलना चाहिए कि गर्भनिरोधकों के मामले में भारत विश्व का सबसे बड़ा बाज़ार है। भारत में गर्भनिरोधक के तकरीबन 4 करोड़ उपयोगकर्ता हैं। भारत का बाज़ार यूरोप के स्विट्ज़रलैण्ड, नॉर्वे, स्वीडन तथा ऑस्ट्रेलिया जैसे देशों की कुल आबादी से भी बड़ा है। इसलिए आश्चर्य नहीं कि बहुराष्ट्रीय कम्पनियां इस बाज़ार को लुभाने के लिए दवा का प्रचार बहुत आक्रामक ढंग से करती हैं। एक ऐसा 'पैकेज' प्रस्तुत किया जाता है जिसमें छिपाया अधिक व बताया कम जाता है।

गैर सरकारी संगठनों की मॉनीटरिंग और अनुसंधान की गुणवत्ता सुनिश्चित करना भी ज़रूरी है। अनसुंधान में बढ़ते निजीकरण से समस्याएं खड़ी हुई हैं। चौथे चरण के चिकित्सीय परीक्षणों के स्थान पर पूर्वाग्रह रहित वैज्ञानिक संस्थाओं द्वारा पी.एम.एस. एक नई प्रवृत्ति है। ऐसी दवा कम्पनियों द्वारा किए गए चिकित्सीय परीक्षण और पी.एम.एस. जिन्हें इन शोध परिणामों से फायदा होने वाला है, इन आंकड़ों और उनके विश्लेषण के 'वैज्ञानिक उद्देश्यों' को लेकर गम्भीर प्रश्न उठाते हैं। इसलिए फायदे की मंशा से किए गए शोधों और व्यक्तियों को ध्यान में रखकर किए शोधों में भेद करना ज़रूरी है।

(स्रोत विशेष फीचर्स)